6

यूरोप और भारत में आधुनिक संस्कृति का उदय

पूर्व–आधुनिक काल (सन् 1300 से सन् 1800)

XY5GSK

इस पाठ में हम भारत के अलावा कई और देशों के बारे में पढ़ेंगे। क्यों न हम इन देशों की यादें ताजी कर लें? कक्षा 7 में हमने यूरोप महाद्वीप के बारे में पढ़ा था। यह भारत के उत्तर पश्चिम दिशा में स्थित है। इसके कुछ प्रमुख देशों के बारे में तो आप जानते ही होंगे। अपने दीवार मानचित्र/एटलस में यूरोप के मानचित्र में इन देशों के नाम पहचानें और उन्हें मानचित्र में खोजें।

1. वह देश जिसका शासन भारत पर सन् 1947 तक रहा।
2. वह देश जिसकी राजधानी पेरिस नामक सुन्दर शहर है।
3. एक प्राचीन सभ्यता वाला देश जिसने सुकरात और प्लेटो जैसे महान दार्शनिक दुनिया को दिया।
4. एक देश जो भूमध्य सागर से तीन तरफ से घिरा है जिसकी राजधानी रोम है।
5. मध्य यूरोप का एक विकसित देश जिसकी राजधानी बर्लिन है।
6. पूर्वी यूरोप का एक विशाल देश जिसकी राजधानी मास्को है।
7. अगर भारत से पेरिस स्थल के मार्ग से जाना है तो हमें किन–किन देशों से होकर जाना होगा?
8. यदि भारत के समुद्री मार्ग से इंग्लैंड जाना है तो किस रास्ते से जाएँगे, मानचित्र पर उँगली फेर कर बताएँ।
9. मानचित्र में ईरान को खोजें। इस देश का भारत से बहुत पुराना सांस्कृतिक संबंध है।
10. ईरान के पश्चिम में ईराक ढूँढें– यहाँ हड़प्पा सभ्यता की समकालीन सभ्यता थी।
11. अरब प्रायद्वीप खोजें। जहाँ इस्लाम धर्म की शुरूआत हुई थी और फिलस्तीन देश पहचानें जहाँ ईसाई धर्म की शुरूआत हुई थी।

आधुनिक काल और उससे पहले

आधुनिक काल जिसमें हम रहते हैं, उसकी कई पहचान हो सकती हैं। कक्षा में चर्चा करें। आप किन बातों को आधुनिकता की पहचान मानेंगे? किन बातों में आधुनिक काल उससे पहले के कालों से अलग है। आर्थिक व्यवस्था में, सामाजिक व्यवस्था में, विचार और संस्कृति में और राजनैतिक व्यवस्था में? इन बातों पर कक्षा में चर्चा करें।

इतिहासकार भी आपकी ही तरह बहस करते हैं कि 'आधुनिक विश्व की क्या पहचान है'? आमतौर पर माना जाता है कि औद्योगिक उत्पादन और लोकतांत्रिक राज्य इस युग की मुख्य पहचान हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर परिवर्तन का वर्णन करना ज्यादा कठिन है फिर भी कुछ सामान्य बातें जरूर कही जा सकती हैं– लोगों की

जात–पात को कम महत्व दिया जाना, सबकी कानूनी समानता और साथ–ही–साथ समाज के विविध वर्गों के बीच बहुत अधिक आर्थिक असमानता। सोच–विचार के स्तर पर पहले लोग ज्यादा धर्मभीरु होते थे, किन्तु अब लोग विज्ञान और तार्किकता पर अधिक विश्वास रखने लगे हैं। मध्यकाल के समाज ने आधुनिक काल में कब–और–कैसे प्रवेश किया यह अध्ययन का विषय है। जिस काल में यह बदलाव शुरू हुआ उसे पूर्व–आधुनिक काल अर्थात् आधुनिक काल का शुरुआती समय कहा जाता है।

एशिया और यूरोप महाद्वीपों के देशों में चौदहवीं शताब्दी से अर्थात् सन् 1300 के बाद व्यापार, शहरीकरण, राजनीति, कला, धर्म, लोगों की सोच आदि में बदलाव आने लगा। यह दौर लगभग सन् 1750 तक चला इसके बाद औद्योगिक क्रान्ति और फ्रांसीसी क्रान्ति के कारण आधुनिक युग की शुरुआत हुई। अतः सन् 1300 से सन् 1750 के काल को हम पूर्व–आधुनिक काल और उसके बाद के काल को आधुनिक काल कहते हैं। भारत, ईराक, ईरान और तुर्की जैसे एशियाई देशों तथा यूरोप के इटली, हॉलैंड, फ्रांस, इंग्लैंड जैसे देशों में चौदहवीं सदी से लेकर अठारहवीं सदी के बीच क्या घटनाएँ घटीं जिन्होंने आर्थिक व राजनैतिक क्रान्तियों को सम्भव बनाया? बदलाव तो कई हुए लेकिन यहाँ हम केवल सांस्कृतिक, धार्मिक और वैचारिक बदलावों की बात करेंगे। चौदहवीं से अठारहवीं सदी के बीच तीन तरह की प्रक्रियाएँ हुईं जिन्हें हम इन नामों से जानते हैं रेनासाँ या पुनर्जागरण, धर्मसुधार, रिफॉरमेशन और एन्लाइटनमेंट (प्रबोधन) अर्थात् विज्ञान, लोकतंत्र और प्रगतिशील विचारों का विस्फोट। हालाँकि ये तीनों यूरोप के इतिहास से जुड़ी घटनाएँ हैं, इनसे मिलती–जुलती कई बातें भारत, ईरान या तुर्की जैसे एशियाई देशों में भी इसी काल में देखी जा सकती हैं। जैसे भारत में भक्ति व सूफी आंदोलन तथा नए कलाबोध का विकास इसी समय प्रारंभ हुआ। यही नहीं, यूरोप में हुए इन बदलावों के पीछे एशिया और अफ्रीका के देशों का काफी महत्वपूर्ण योगदान था। इस कारण पिछले कुछ दशकों से इतिहासकार इन्हें केवल यूरोप के सन्दर्भ में नहीं बल्कि वैश्विक सन्दर्भ में देखने का आग्रह कर रहे हैं।

हम सबसे पहले विश्व के दीवार मानचित्र या एटलस में भारत, ईरान, ईराक, तुर्की, स्पेन, इटली, फ्रांस, हॉलैंड, इंग्लैंड आदि देशों को पहचानें।

इन देशों के कुछ प्रमुख शहरों को भी पहचानें, जैसे– विजयनगर, सूरत, दिल्ली, तेहरान, इस्फहान, बगदाद, इस्ताम्बुल, वेनिस, रोम, फ्लोरेंस, जेनेवा, पेरिस, लंदन आदि।

XYECU8

6.1 बदलाव के विभिन्न पहलू

सन् 1300 से सन् 1750 के बीच ऐसी क्या बातें हुईं? आईए हम पता करें आधुनिक युग का प्रारंभ कैसे हुआ?

व्यापार और शहरीकरण– उस दौर में यूरोप, उत्तरी अफ्रीका व एशिया के बीच व्यापार में बहुत तेजी आई। विभिन्न देशों में भी व्यापार का विस्तार हुआ और तरह–तरह के सामानों का आदान–प्रदान होने लगा। व्यापार के विकास के साथ–साथ तीनों महाद्वीपों में शहरीकरण बढ़ा जिससे नए शहर बसे और पुराने शहरों का विस्तार हुआ। इसके कई परिणाम हुए, धनी व्यापारियों का वर्ग उभरा, देशों के बीच लोगों का आवागमन बढ़ा जिससे विचारों का आदान–प्रदान होने लगा, नए–नए आविष्कार हुए और नई तकनीकों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलाव हुआ।

यूरोप व भारत के शहरों में एक महत्वपूर्ण अन्तर था। यूरोप के कई शहर ऐसे थे जिन्हें स्वायत्तता प्राप्त थी और वे राजाओं के हस्तक्षेप के बिना स्वतंत्र रूप से अपना शासन चला सकते थे। शहर के व्यापारियों और कारीगरों के संगठन मिलकर शहरों के कामकाज संभालते थे। ऐसे शहरों में कुछ हद तक लोकतंत्र और गणतंत्र की भावनाएँ विकसित हो पाईं। ऐसे शहर थे– जेनेवा और फ्लोरेंस (दोनों इटली में हैं), फ्लैंडर्स (हॉलैंड में है) आदि। भारत में सूरत, आगरा, विजयनगर जैसे बड़े शहरों का विकास हुआ लेकिन उन पर राजाओं या उनके सामन्तों का वर्चस्व बना रहा।

सन् 1400 में किन–किन चीजों व विचारों का आदान–प्रदान होता रहा होगा? अंदाजा लगाएँ।

केन्द्रीकृत राज्य– इस बीच इन देशों में शक्तिशाली राज्य बनने लगे। भारत में विजयनगर साम्राज्य, मुगल साम्राज्य आदि बने। ईरान में सफविद साम्राज्य और तुर्की में ऑटोमान साम्राज्य बना। यूरोप में भी कई शक्तिशाली राज्य स्थापित हुए जिनमें फ्रांस, स्पेन व इंग्लैंड के अलावा इटली के कई छोटे राज्य भी शामिल थे। आमतौर पर इनके

शासक बहुत महत्वाकांक्षी थे और वे राज्य के अन्दर शक्ति का केन्द्रीकरण कर रहे थे। अर्थात् एक राजा या बादशाह के हाथों में सत्ता, अधिकार और धन इकट्ठा होने लगा। चूँकि इन राज्यों में आर्थिक और राजनैतिक शक्ति बादशाहों के हाथों केन्द्रित थी, इन्हें केन्द्रीकृत राज्य कहते हैं। इस काल से पहले जमींदार, सामन्त आदि स्वायत्त रूप में शासन चलाते थे। अब इनके अधिकार कम कर दिए गए या समाप्त कर दिए गए।

कई लोगों का कहना है कि आज राज्य के पास मुगलों की केन्द्रीकृत शासन प्रणाली की तुलना में कई गुना अधिक शक्ति व अधिकार है। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? अपने कथन के पक्ष में तर्क दीजिए।

शहरी मध्यम वर्ग का उभरना– व्यापार और शहरों के विकास तथा केन्द्रीकृत राज्यों के विकास का एक परिणाम यह हुआ कि इन देशों में एक नया मध्यम वर्ग उभरकर आया। इसमें व्यापारी, धनी कारीगर, मुंशी, लिपिक, वकील, पेशेवर कलाकार, कवि, लेखक आदि सम्मिलित थे। शहरीकरण और राज्यों के विकास के कारण जो नए–नए काम उभरे (जैसे– हिसाब–किताब रखना, प्रशासन, कर वसूली, न्यायालयीन काम, राज्यों के बीच दूत का काम आदि) उन्हें करने वाले लोग भी इसी वर्ग में शामिल थे। इस नए मध्यम वर्ग के लोग लगातार आर्थिक तंगी में रहते थे और अच्छी नौकरी की खोज में दूर–दराज के राज्यों में जाकर रहने के लिए तैयार होते थे। इस तरह बड़े क्षेत्र में विचरण करने के कारण यह वर्ग समालोचनात्मक दृष्टि रखता था और तत्कालीन धर्मगुरु या शासकों की आलोचना करने से कतराता नहीं था।

इस मध्यम वर्ग के बनने में शिक्षा का बहुत महत्व था। उन्हें न केवल साक्षर होना जरूरी था बल्कि अपने काम को प्रभावी तरीके से करने के लिए व्यापक साहित्यिक शिक्षा की जरूरत थी। यूरोप में यह शिक्षा ग्रीक और लैटिन भाषा के प्राचीन साहित्य के अध्ययन से और भारत में फारसी और संस्कृत साहित्य के अध्ययन के माध्यम से मिल सकती थी। रोचक बात तो यह थी कि कई प्राचीन रचनाएँ जैसे– यूनान के अरस्तू और प्लेटो का साहित्य तथा भारत का 'पंचतंत्र' व गणित के ग्रन्थ विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करके पढ़े गए। भारत में मुगलकाल में प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों, जैसे– रामायण, महाभारत, उपनिषद् आदि का अनुवाद अरबी व फारसी में किया गया।

यूरोप और भारत में जो मध्यम वर्ग उभरा उनमें कई समानताओं के बावजूद कुछ महत्वपूर्ण अन्तर थे। एक तो यह था कि भारत में यह वर्ग कुछ विशेष जातियों तक सीमित था, जैसे– कायस्थ, क्षत्रिय या ब्राह्मण, जबकि यूरोप में इस वर्ग में विविध समूहों व वर्गों के लोग सम्मिलित हुए। दूसरा महत्वपूर्ण अन्तर यह था कि भारतीय मध्यम वर्ग ने गणित या विज्ञान के अध्ययन में रुचि कम दिखाई जबकि यूरोप में इसे महत्वपूर्ण माना गया।

6.2 रेनासाँ (पुनर्जागरण)

6.2.1 प्राचीन साहित्य का अध्ययन और देश–विदेश का ज्ञान

प्राचीन यूनानी व लैटिन साहित्य के केन्द्र में मनुष्य और उसके जीवन के विभिन्न पहलू थे। राजनीति, नीतिशास्त्र, दर्शन, कानून, सुसंस्कृत व्यवहार और भौतिक दुनिया का अध्ययन आदि इनके प्रमुख विषय थे। मनुष्य को केन्द्र में रखने के कारण ऐसे साहित्य के अध्ययन को मानविकी अध्ययन (Humanities) या मानववाद (Humanism) भी कहा जाता है। कई मायनों में यह सब धार्मिक चिन्तन से हटकर था। इनमें किसी धर्मग्रन्थ या धर्मगुरु में विश्वास, पारलौकिक पुण्य के लिए इस लोक में त्याग, तपस्या या कष्ट सहना आदि बातों पर जोर नहीं था। वे तार्किक सोच को बढ़ावा देते थे और व्यक्ति के खुद सोचने–विचारने पर जोर देते थे। वे किसी धर्मगुरू की बातों को भी तर्क की कसौटी पर परखने पर जोर देते थे। इसी कारण मध्यकाल में जब ईसाई धर्म का वर्चस्व यूरोप में स्थापित हुआ तो उसके धर्मगुरुओं के द्वारा प्राचीन ग्रीक और लैटिन साहित्य की आलोचना की गई।

मध्यकालीन यूरोप में प्राचीन ग्रीक और लैटिन साहित्य का अध्ययन ईसाई चर्च के प्रभाव के कारण बहुत सीमित हो गया। यह साहित्य ईसा मसीह के जन्म के पहले रचा गया था और ईसाई धर्म के अनुरूप नहीं था। चर्च का आग्रह था कि इस लोक में सुख प्राप्ति की चिन्ता न करके परलोक में स्वर्ग प्राप्ति के लिए प्रयास करना चाहिए। चर्च के

विरोध के चलते ये प्राचीन साहित्य पश्चिमी यूरोप में लुप्त होते गए किन्तु ईरान, ईराक आदि इस्लामी देशों में ग्रीक और लैटिन साहित्य का अनुवाद और अध्ययन चलता रहा।

चौदहवीं सदी तक इस्लामी संस्कृति का प्रभाव एशिया में भारत से लेकर यूरोप में स्पेन तक फैला था। इन क्षेत्रों में जैसे– चीनी, मध्य एशियाई, भारतीय, ईरानी, ईराकी, मिस्री, यूनानी आदि कई संस्कृतियों व सभ्यताओं का मेल–मिलाप हो रहा था। इस्लामी देशों के विद्वानों ने इसका भरपूर फायदा उठाया और चीनी, भारतीय, ईरानी तथा यूनानी साहित्य का अरबी और फारसी भाषाओं में अनुवाद करके अध्ययन किया। चौदहवीं सदी में जब पश्चिमी यूरोप में प्राचीन साहित्य में रुचि फिर से जागृत हुई तब इस्लामी देशों में संरक्षित ग्रन्थ और उनके अरबी अनुवाद बहुत काम आए। इनके अलावा प्राचीन भारतीय गणित, खगोलशास्त्र और चीनी विज्ञान का ज्ञान भी यूरोप के विद्वानों को मिला।

प्राचीन ग्रीक और लैटिन साहित्य के अध्ययन के प्रति चर्च का क्या दृष्टिकोण था? इसके पीछे उसकी क्या मान्यताएँ थीं?

प्राचीन यूनानी साहित्य के कौन–कौन से विषय थे? उनकी सूची बनाएँ।

6.2.2 यूरोप में मानववाद (Humanism)

सन् 1300 के आसपास यूरोप के विद्वान पुरानी लैटिन और ग्रीक भाषा की पुस्तकों के अध्ययन में रुचि लेने लगे। वे बढ़ते व्यापार, शहरीकरण और उभरते राज्यों के कारण उपजी चुनौतियों पर विचार कर रहे थे तथा नए व्यवसायों व नौकरियों की सम्भावना का फायदा भी उठाना चाहते थे।

क्या आप बता सकते हैं कि शहरीकरण और नए राज्यों के बनने से किस तरह के व्यवसाय व काम विकसित हुए होंगे?

व्यापार से मुनाफा कमाने, राजा के शक्तिशाली बनने जैसी बातों से लोगों को किस तरह की परेशानी हो सकती थी?

लैटिन भाषा के विद्वान इटली के फ्रांसेस्को पेट्रार्क (जन्म सन् 1304, मृत्यु सन् 1374) को मानविकी अध्ययन आन्दोलन का जनक माना जाता है। वे इस बात से परेशान थे कि उनके समय के लोग भाषा का सही प्रयोग नहीं करते हैं। वे प्राचीन लैटिन साहित्य पढ़ने लगे ताकि वे समझ सकें कि भाषा का सही उपयोग कैसे हो? प्राचीन पुस्तकों को पढ़ने से वे समझने लगे कि इनकी मदद से हम सही भाषा के अलावा अपनी बुद्धि को सही तरीके से सोचने और दुनिया को बेहतर समझने के लिए तैयार कर सकते हैं। पेट्रार्क जैसे लोगों के प्रयासों से चौदहवीं और पन्द्रहवीं सदी में यूरोप में ग्रीक और लैटिन साहित्य का अध्ययन तेजी से फैला। मानववादियों का मानना था कि इससे युवाओं में सोचने के तरीके और औपचारिक पत्र लेखन, भाषण देना, किसी न्यायालय में पक्ष प्रस्तुत करना, व्यापार या राजनयिक मकसद से बातचीत करना आदि व्यावहारिक कुशलताएँ भी विकसित होंगी। अतः वे ऐसी शिक्षा देने के लिए शालाएँ स्थापित करने लगे। इस काम में उन्हें जर्मन कारीगर गुटनबर्ग की लगभग सन् 1439 में बनी छपाई–प्रेस के आविष्कार से बहुत मदद मिली जिसमें एक किताब की सैकड़ों प्रतियाँ आसानी से तैयार की जा सकती थीं। इसके फलस्वरूप नई व पुरानी पुस्तकों की प्रतियाँ बहुत बड़ी मात्रा में दूर–दूर तक पहुँच सकती थीं। इससे विद्वानों के बीच संवाद और विचारों का आदान–प्रदान बहुत सरल हो गया।

चित्र 6.1 : फ्रांसेस्को पेट्रार्क

एक रोचक बात यह है कि मानववादी विचारकों ने प्राचीन भाषाओं में रचे साहित्य के अध्ययन को तो महत्व दिया लेकिन लेखन कार्य के लिए क्षेत्रीय भाषाओं, जैसे– इतालवी, जर्मन, अँग्रेजी, फ्लेमिश और फ्रेंच को ही चुना। वे ऐसी भाषा का उपयोग करना चाहते थे जिसे जनसामान्य समझ सके।

मानविकी अध्ययन और उससे पहले के मध्यकालीन अध्ययनों में क्या विशेष अन्तर था? हमने ऊपर देखा था कि मध्यकालीन अध्ययन धार्मिक मामलों पर केन्द्रित थे और कोई विद्वान यह हिम्मत नहीं कर सकता था कि वह चर्च के विचारों के विरुद्ध लिखे या बोले। लेकिन अब अध्ययन मनुष्य के आम जीवन से जुड़ी बातों, जैसे नायक और नायिका के बीच प्रेम, राजनैतिक व्यवस्थाएँ, आर्थिक जीवन के मुद्दे आदि पर केन्द्रित होने लगे। बाद में कई विद्वान और वे भी जो चर्च पर आश्रित थे, चर्च की आलोचना करने से नहीं चूके। उदाहरण के लिए लारेन्जो वल्ला नामक लैटिन भाषा के विद्वान ने सन् 1435 में चर्च के कुछ महत्वपूर्ण दस्तावेजों का अध्ययन करके ऐलान किया कि वे जाली दस्तावेज हैं। इनमें वे दस्तावेज भी शामिल थे जिनके आधार पर रोमन कैथोलिक चर्च यह दावा करता था कि प्राचीन काल में रोमन सम्राटों ने कई राजकीय अधिकार चर्च को दे रखे थे।

चित्र 6.2 : एरासमस. सन् 1526 में ड्यूरर नामक कलाकार द्वारा बनाया गया चित्र जिसे छापाखाने में छापकर वितरित किया गया था। इस चित्र से एरासमस की क्या छवि उभर रही है? इस चित्र में एरासमस और ड्यूरर के नाम कहाँ और कैसे लिखे गए हैं? इसमें सन् 1526 के अंको को कैसे दिखाया गया है?

हॉलैंड देश के एक और प्रसिद्ध मानववादी विद्वान, एरासमस (जन्म सन् 1466, मृत्यु सन् 1536) ने प्रारम्भिक यूनानी ईसाईयों के साहित्य और बाईबल के प्राचीन ग्रीक मूल पाठ का भी अध्ययन किया। उन्होंने यह दिखाया कि चर्च द्वारा किए गए बाईबल के लैटिन अनुवाद में बहुत सारी गलतियाँ हैं। एरासमस ने चर्च की कई मान्यताओं को अन्धविश्वासी बताया। इस विषय में उन्होंने ''भूल की प्रशंसा'' नामक एक व्यंग्यात्मक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें चर्च के कई कर्मकाण्डों व विचारों की आलोचना की गई।

क्या महिलाएँ भी इस तरह का अध्ययन करती थीं? उन दिनों आमतौर पर पुरुषों को ही औपचारिक शिक्षा दी जाती थी। महिलाओं से अपेक्षा थी कि वे घर के कामकाज को संभालें। लेकिन कुछ महिलाएँ ऐसी भी थीं जिन्होंने इस सीमा को लाँघा और ग्रीक व लैटिन साहित्य का अध्ययन किया और मानववादी लेखकों में अपना नाम दर्ज किया। ऐसी ही एक महिला थीं कस्सान्ड्रा फेडेले (जन्म सन् 1465, मृत्यु सन् 1558)। फेडेले ने आग्रह किया कि महिलाओं को भी इस तरह के साहित्यिक अध्ययन में भाग लेना चाहिए। उन दिनों वेनिस एक गणतंत्र था लेकिन उसमें महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। फेडेले ने इसकी आलोचना करते हुए कहा कि इससे स्वतंत्रता और लोकतंत्र सीमित होता है और पुरुषों की इच्छाओं को प्राथमिकता मिलती है। एक तरह से यह पुरुष–प्रधान व्यवस्था की शुरुआती आलोचना थी। इससे आने वाले समय में नारीवादी विचारों के उभरने का रास्ता खुला।

दूसरे मानववादी चिन्तक थे, इटली के मैक्यावेली। मैक्यावेली ने सन् 1513 में एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित की जिसका नाम था ''द प्रिंस''। यह मूलतः राजनीति का एक अध्ययन था। इसकी विशेषता यह थी कि इसमें किसी आदर्शवाद की चर्चा न होकर यथार्थ में जो राजनैतिक प्रक्रियाएँ चल रही थीं, उनकी विवेचना थी। इसमें नैतिकता

की चिन्ताओं से मुक्त होकर कोई राजा किस प्रकार निरंकुश शक्ति अर्जित कर सकता है, इसका वर्णन मिलता है।

इस तरह हम देख सकते हैं कि प्राचीन साहित्य के अध्ययन से मानववाद शुरू हुआ था जिससे अपनी अभिव्यक्ति और चिन्तन को प्रभावी और सुसंस्कृत किया जा सके। देखते–ही–देखते वह चर्च के विरुद्ध हो गया। इस आन्दोलन के स्थाई प्रभावों में उदार साहित्यिक शिक्षा और बुद्धिजीवियों की स्वतंत्रता महत्वपूर्ण बातें हैं।

आप मानववाद के कुछ प्रमुख पहलुओं की सूची बनाइए।

मानविकी अध्ययन आंदोलन का जनक किसे माना जाता है? उन्हें किस बात की चिंता थी?

मानववादी अध्ययन के क्षेत्र में महिलाओं की क्या भूमिका थी?

मैक्यावेली ने किस विषय पर किताब लिखी?

छपाई प्रेस का आविष्कार मानविकी अध्ययन के लिए किस तरह सहायक था?

क्या आपको लगता है कि बुद्धिजीवियों को स्वतंत्रता के साथ समाज की विवेचना करनी चाहिए या शासन या समाज द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्दर ही काम करना चाहिए? तर्क सहित अपने विचार रखें।

यूरोप के बुद्धिजीवियों को नए विचारों की खोज में प्राचीन साहित्य की मदद क्यों लेनी पड़ी?

पुस्तकों की छपाई का बुद्धिजीवियों की स्वतंत्रता पर क्या प्रभाव पड़ा?

आज के युग में छपाई की जगह एक दूसरी तकनीक ने ले ली है– वह क्या है और उसका बुद्धिजीवियों की स्वतंत्रता पर क्या प्रभाव पड़ा है?

भारत में

हमने पहले देखा था कि भारत में भी संस्कृत, फारसी, अरबी आदि साहित्य का अध्ययन और अनुवाद जोरों से चल रहा था। इसमें न केवल मुगल बादशाह बल्कि छोटी–छोटी रियासतों के शासक भी पहल कर रहे थे। इस काल में मुंशियों व मुनीमों का काफी महत्व था– वे शिक्षित थे और उनके बिना शासन नहीं चल सकता था। इन लोगों ने मुगल काल के बारे में कई ग्रन्थ रचे जिनमें हम उनकी विवेचनात्मकता और विश्लेषण की क्षमता देख सकते हैं। मुगलकालीन मध्यम वर्ग की एक और विशेषता यह थी कि वह एक मिली–जुली संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती थी जो भारतीय और मध्य एशियाई तत्वों से बनी थी। वे इन सभी धाराओं से अपनी प्रेरणा लेते थे और उनका दैनिक जीवन इन सबसे प्रभावित था। यही नहीं, वे राजाओं पर आश्रित होने पर भी उनकी स्वतंत्र रूप से आलोचना कर सकते थे। उदाहरण के लिए कई मुंशी अपनी पुस्तकों में औरंगजेब की असहिष्णु नीतियों की आलोचना करते हैं। भारत और यूरोप की बौद्धिक व्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण अन्तर यह था कि भारत में छपाई– प्रेस का उपयोग न के बराबर हुआ।

मुंशी और मुनीम – ये लोग मुगल काल के शासकीय दफ्तरों में तथा व्यापारियों के यहाँ चिट्ठी–पत्री लिखना, कानूनी दस्तावेज तैयार करना, हिसाब–किताब रखना, घटनाओं का विवरण लिखना आदि महत्वपूर्ण प्रशासनिक काम करते थे। वे विभिन्न देशों की भाषा तथा तौर–तरीकों के जानकार भी थे।

छत्तीसगढ़ में रतनपुर के साहित्यकार गोपाल मिश्र के अपने व्यंग्यात्मक काव्य 'ख़ूब तमाशा' (लगभग सन् 1689) में हम उनकी मिली–जुली सांस्कृतिक पहचान को देख सकते हैं। इसके शीर्षक के दोनों शब्द फारसी मूल के हैं।

6.2.3 कला और कलाबोध का एक नया दौर

सन् 1300 के बाद भारत सहित कई देशों में कला की एक नई लहर चली। भारत में सबसे महत्वपूर्ण असर वास्तुकला पर देखा जा सकता है। तुर्कों के आगमन से कई नई तकनीकों, जैसे– भवन निर्माण में मेहराब और गुम्बद का व्यापक उपयोग होने लगा। ये तकनीक मूलतः प्राचीन यूनान और रोम में विकसित हुई थी। जब इनका इस्लामी देशों में

उपयोग हुआ तो इन्हें एक नया स्वरूप मिला जो इस्लामी धार्मिक सोच को प्रकट करता था। जब इस्लामी गुम्बद और मेहराब भारत में बनाए जाने लगे तो इनका मेलजोल पूर्व मध्यकालीन मन्दिर–वास्तुकला के तरीकों के साथ हुआ। फलस्वरूप एक नई मध्यकालीन भारतीय वास्तुकला विकसित हुई जिसे हिन्दू व मुसलमान दोनों शासकों ने अपनाया। यहाँ नीचे इस परिवर्तन के कुछ उदाहरण दिए गए हैं जिनकी मदद से हम इस बात को समझ सकते हैं।

चित्र 6.3 में हम देख सकते हैं कि यूनानी मन्दिरों में छत का वजन उठाने के लिए खम्भों का उपयोग किया जाता था। भारतीय मन्दिरों में भी खम्भे और आड़ी बीम छत का वजन ढोने का काम करती थी।

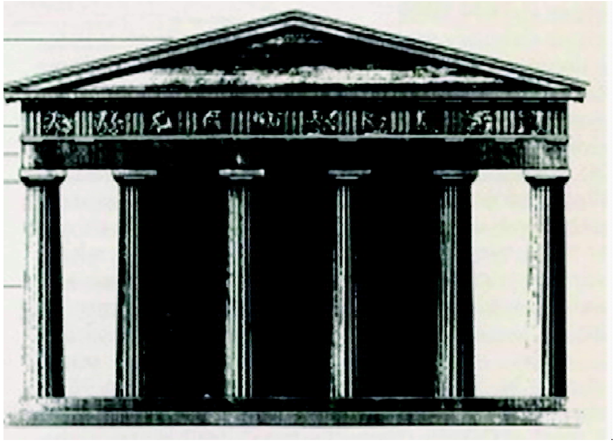

चित्र 6.3 : यूनानी मन्दिर

चित्र 6.4 : सन् 1054 में बना खजुराहो का कन्दरिया महादेव मन्दिर

मध्यकालीन भारतीय मन्दिरों में केवल खम्भों व बीमों का उपयोग करते हुए अतिविशाल और ऊँचे भवनों का निर्माण किया गया। यहाँ हम खजुराहो मन्दिर का चित्र 6.4 देख सकते हैं जिसमें इस बात की पुष्टि होती है। यह मन्दिर लगभग एक हजार साल पुराना है। इसे हम मन्दिर निर्माण कला का उत्तम उदाहरण मान सकते हैं। इसमें एक अत्यन्त जटिल आकृति सैकड़ों छोटे मन्दिर–शिखरों को मिलाकर बनाई गई है।

चित्र 6.5 : फ्रांस के पेरिस में बना नाट्रडेम गिरजाघर

चित्र 6.6 : रोमन मेहराब

रोचक बात यह है कि उत्तरी यूरोप में भी जटिल आकृति वाले गिरजाघर बारहवीं सदी से बनने लगे हैं। इस शैली को 'गोथिक शैली' कहते हैं। इसका एक नमूना पेरिस नगर का प्रसिद्ध नाट्रडेम गिरजाघर चित्र 6.5 है।

आज से दो हजार साल पहले रोमन साम्राज्य में छत के वजन को उठाने के लिए मेहराबों का भी उपयोग होने लगा था। (चित्र 6.6) मेहराबों की मदद से गुम्बदों का भी निर्माण होने लगा था। आगे हम एक रोमन गुम्बद, पैंथियन (चित्र 6.7) देख सकते हैं। अन्दर से देखने में यह बहुत भव्य

लगता है, लेकिन बाहर से देखने में उतना प्रभावी नहीं दिखता है। चित्र 6.7 और 6.8 की तुलना करें।

बाहर से प्रभावी गुम्बद इस्लामी वास्तुकला की देन है। (देखें यरूशेलम में सन् 691 में बना गुम्बद "डोम आफ द राक" का चित्र 6.9)।

इसमें हम देख सकते हैं कि मेहराबों से सजे भवन पर शानदार ऊँचा गुम्बद कितना प्रभावशाली दिख रहा है। भारत में इस शैली के साथ भारतीय मन्दिर वास्तुकला का सुन्दर मिश्रण हुआ जिसके विभिन्न रूप हम विजयनगर के लोटस महल, फतेहपुर सीकरी के राजमहल आदि में देख सकते हैं। गुम्बद और मेहराब का नया और अद्वितीय स्वरूप ताजमहल (सन् 1648) में देख सकते हैं।

ताजमहल के गुम्बद और मेहराब में भारतीय नक्काशी व डिजाईन का समावेश है। उदाहरण के लिए गुम्बद के शीर्ष पर बना विशाल उल्टा कमल का फूल और उससे निकली कलशावली। गुम्बद खुद गोलाई के साथ एक गेंद का आभास देता है।

चित्र 6.7 : पैंथियन – अन्दर का दृश्य

चित्र 6.8 : पैंथियन का बाहरी दृश्य

चित्र 6.9 : यरूशैलम में सन् 691 में बना गुम्बद–"डोम आफ द राक"

इस तरह हम देख सकते हैं कि जिस गुम्बद और मेहराब का उपयोग रोमन साम्राज्य ने प्राचीन काल में किया था जिसे मध्यकालीन पश्चिमी यूरोप में भुला दिया गया था, उनका इस्लामी देशों और भारत में भरपूर उपयोग किया गया। यही नहीं, उसे एक नया रूप दिया गया। जब इटली में चौदहवीं सदी में फिर से प्राचीन यूनानी और रोमन संस्कृति में रुचि जगी तो वहाँ के वास्तुशिल्पियों ने मेहराब और गुम्बद का उपयोग फिर से शुरू किया। इसमें उन्होंने गुम्बद और मेहराब के उस

चित्र 6.10 : ताजमहल

स्वरूप को अपना आधार बनाया जिसे इस्लामी वास्तुशिल्प ने विकसित किया था। इटली के प्रसिद्ध कलाकार माइकलेंजेलो ने जब सन् 1547 में सेंट पीटर के मकबरे की कल्पना की तो उसने यूनानी मन्दिर, रोमन गुम्बद तथा इस्लामी गुम्बदों से प्रेरणा ली।

चित्र 6.11 में यूनानी, रोमन और इस्लामी वास्तुकला के प्रभावों को पहचानने का प्रयास करें। इसे रेनासाँ वास्तुकला का एक श्रेष्ठ नमूना माना जाता है। इसकी तुलना नाट्रडेम गिरजाघर से करें। दोनों के पीछे जो सोच है उसमें आपको क्या फर्क दिखता है?

चित्र 6.11 : रोम स्थित सेंट पीटर का मकबरा जिसे माइकलेंजेलो ने आकार दिया (सन् 1547)

इस तरह की वास्तुशैली जिसमें ऊँचे यूनानी खम्भों, मेहराब और गुम्बद का उपयोग किया जाता है– को 'क्लासिकल शैली' या शास्त्रीय शैली कहा जाता है। इस शैली का प्रचलन आज भी है।

6.2.4 चित्रकला और मूर्तिकला

रेनासाँ युग मुख्य रूप से अपनी विशिष्ट चित्रकला और मूर्तिकला के लिए जाना जाता है। यूरोप के मध्ययुग में चित्रकला के विषय काफी सीमित थे जिनमें प्रमुख थे– बाईबल के पात्रों और सन्तों के चित्र 6.12 ।

चित्र 6.12 : तेरहवीं सदी में बना माता मरियम, शिशु यीशु और सन्त

तेरहवीं सदी के अन्त में इसमें बदलाव होने लगा और नए जीवन्त चित्रण, जीते–जागते लोगों के अवलोकन के आधार पर बने। अब भी धार्मिक विषय महत्वपूर्ण बने रहे मगर रईसों व सफल पेशेवरों के चित्र भी बनने लगे। धार्मिक विषयों का चित्रण भी इस तरह से किया गया कि मनुष्य जीवन के विभिन्न पहलुओं, भावनाओं, अवस्थाओं तथा मानव शरीर के विभिन्न रूपों को दर्शाया जाए।

रंग, तकनीक और विज्ञान का उपयोग– चित्रकार एक ओर वस्तुगत हकीकत को हू–ब–हू दर्शाने का प्रयास कर रहे थे और दूसरी ओर नए रंगों व तरीकों को आजमा रहे थे। इस दौर में भारत और ईरान से आए नए रंगों का उपयोग यूरोप में होने लगा। साथ–साथ तैलरंगों का उपयोग भी होने लगा। इनकी मदद से रंगों के अनेक शेड दिखाए जा सकते थे।

एक और महत्वपूर्ण आविष्कार परिप्रेक्ष्य (पर्स्पेक्टिव) की समझ ने किसी चीज को जैसे वह दिख रही है वैसे ही दर्शाने में मदद की। जब हम किसी दृश्य को देखते हैं तो पास की चीजें बड़ी और दूर की छोटी दिखेंगी। वे पीछे की ओर एक ज्यामितीय अनुपात में छोटी होती जाएँगी। इस अनुपात की गणना ने चित्रकारों को दूर और पास की चीजों को अलग करने में मदद की। इसका एक उदाहरण प्रसिद्ध चित्रकार रैफेल के इस चित्र में देख सकते हैं। इस चित्र में हम दूर

व पास का अहसास इस बात से कर पा रहे हैं कि दूर के लोग छोटे और पास के लोग बड़े दिख रहे हैं। इसके ज्यामितीय रूप को मुख्य पात्रों के पीछे सँकरी होती रेखाओं से समझ सकते हैं।

चित्र 6.13 : रैफेल का सन् 1500 के आसपास बना चित्र – माता मरियम की सगाई

एक–दूसरे तरीके से नए विकसित हो रहे विज्ञान ने कलाकारों को मानव शरीर संरचना का अध्ययन करने में मदद की। इसी काल में वेसालियस नामक चिकित्सक ने शवों को काटकर मानव हड्डी, माँसपेशी, आन्तरिक अंग आदि का अध्ययन करके उन पर पुस्तकें प्रकाशित की। कई चित्रकार भी मानव शरीर संरचना को बेहतर समझने के लिए शवविच्छेदन करते थे। इनमें से सबसे प्रसिद्ध थे लियोनार्दो दा विन्ची।

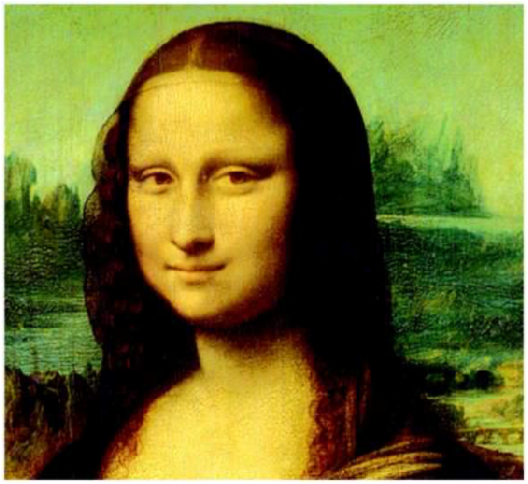

चित्र 6.14 : लियोनार्दो दा विन्ची का महान चित्र, 'मोनालिसा'

दो महत्वपूर्ण चित्रकार

यूँ तो इटली के रेनासाँ काल में कई महान चित्रकार हुए थे, परन्तु यहाँ हम उनमें से केवल दो को ही उदाहरण के लिए ले रहे हैं। ये हैं, लियोनार्दो दा विन्ची और माइकलेंजेलो। लियोनार्दो (जन्म सन् 1452, मृत्यु सन् 1519) एक वैज्ञानिक, शिल्पकार, वास्तुकार, आविष्कारक और चित्रकार थे। वे रेनासाँ युग के लोगों की बहुमुखी रुचि और व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका सबसे चर्चित चित्र है 'मोनालिसा''। इस चित्र में उन्होंने एक महिला को हल्के से मुस्कुराते हुए दिखाया है (चित्र 6.14)। इस मुस्कान के अर्थ बूझने में विद्वान पिछले पाँच सौ सालों से लगे हुए हैं। एक तरह से यह उस युग का प्रतीक है। मनुष्य के क्षणभर के हल्के से हल्के मुखभावों को भी इतना महत्वपूर्ण मानना और उसे हमेशा के लिए चित्र में कैद कर देना इससे पहले कभी नहीं हुआ था।

माइकलेंजेलो (जन्म सन् 1475, मृत्यु सन् 1564) को विश्व इतिहास के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों में गिना जाता है। वे फ्लोरेंस शहर के थे। उन्हें पोप का आश्रय प्राप्त था जिनके लिए उन्होंने अनेक कलात्मक परियोजनाएँ पूरी कीं। इनमें से सबसे अधिक चर्चित है सिस्टाईन गिरजाघर की दीवारों व छत को ईसाई धर्म से सम्बन्धित चित्रों से सजाना। उनके बनाए हुए एक चित्र का अंश देखें (चित्र–6.15 में)। माइकलेंजेलो

चित्र 6.15 सिस्टाईन गिरजाघर की छत पर माइकलेंजेलो का चित्र 'सूर्य और चन्द्रमा की सृष्टि' का एक अंश। इसमें ईश्वर को सूर्य की सृष्टि करते हुए दिखाया गया है। सृष्टि की तीव्रता उनके चेहरे और तीखी नजरों में स्पष्ट दिख रही है। उस तीव्रता को देवदूत भी सहन नहीं कर पा रहे हैं।

जितने अच्छे चित्रकार थे उतने ही अच्छे मूर्तिकार भी थे। उन्होंने इटली के बेदाग संगमरमर का अभूतपूर्व उपयोग किया। यहाँ उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति ''ला पियेता'' को देखें। इस मूर्ति में मानव शरीर, मानवीय भावनाएँ और कपड़ों का यथार्थ चित्रण है। साथ ही मृत बेटे को गोद में थामने वाली माँ का शोक उसकी गम्भीरता में स्पष्ट झलकता है (चित्र 6.16 और 6.17)।

चित्र 6.16 : माइकलेंजेलो की कृति – 'ला पियेता'। मृत ईसा मसीह के शरीर को थामे माता मरियम

चित्र 6.17 : माता मरियम का शोकाकुल चेहरा

रेनासाँ की कला काफी हद तक ईसाई धर्म से तो प्रेरित थी, लेकिन साथ–साथ उस पर प्राचीन रोमन कला का गहरा प्रभाव था। माइकलेंजेलो जैसे कलाकारों ने बहुत ध्यान से प्राचीन चित्रों, मूर्तियों और भवनों का अध्ययन किया था और उनका अनुकरण करने का प्रयास किया था।

पूर्व आधुनिक कालीन भारत में चित्रकला

भारत में पन्द्रहवीं सदी में चित्रकला का एक नया दौर शुरू हुआ। यह लघुचित्रों का युग था जिसमें कागज पर गहरे रंगों का उपयोग करते हुए चित्र बनाए जाते थे। इन लघुचित्रों के दो तरह के प्रेरणा स्रोत थे, एक तो ताड़पत्र पर बने ग्रन्थों के बीच बनाए गए सरल चित्र जिनकी पहचान उनके चटक गहरे रंग हैं। इनमें मनुष्यों व जानवरों को हू–ब–हू न बनाकर उनके आदर्श रुप को दर्शाया जाता था। (चित्र 6.18)

लघुचित्रों का एक और प्रेरणा स्रोत था ईरान की लघुचित्र परम्परा। ईरान में कागज की हस्तलिखित किताबों में वर्णित किस्सों को चित्रों में दर्शाने की प्रथा थी। यह लगभग वही समय था जब यूरोप में रेनासाँ युग शुरू हो रहा था। ईरान

चित्र 6.18 चौदहवीं सदी की गुजराती जैन पाण्डुलिपि में बना चित्र। इसमें महावीर स्वामी के पिता को किसी से बातचीत करते हुए दिखाया गया है। इसमें उपयोग किए गए रंग और मनुष्यों के चित्रण पर ध्यान दें।

चित्र 6.19 ईरानी चित्रकार बिहजाद का बनाया लघुचित्र, 'एक मदरसे में पढ़ाई'। ये चित्र आकार में तो छोटे हैं मगर इनमें लोगों, परिवेश व भवनों को बहुत ही बारीकी से चित्रित किया गया है। यही नहीं इनमें मानवीय घटनाओं के प्राकृतिक और वास्तुशिल्पीय परिदृश्य को बहुत ही कलात्मक तरीके से चित्रित किया गया है। लेकिन इनमें दूर और पास की आकृतियों को एक सी आकार में दर्शाया गया है।

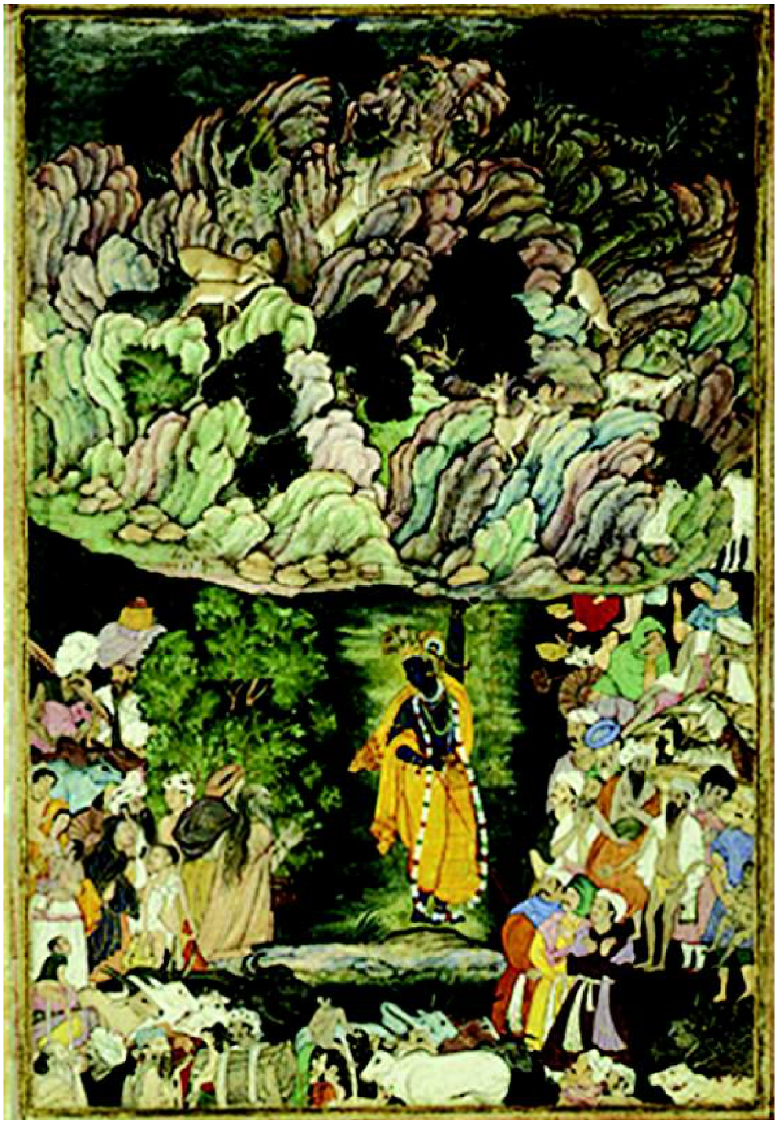

चित्र 6.20 मिस्किन का बनाया चित्र श्री गोवर्धनधारी कृष्ण

के सबसे मशहूर चित्रकार थे बिहजाद (सन् 1450– सन् 1535) जिनका एक चित्र यहाँ दिया गया है। (चित्र 6.19)

जब भारत में मुगलों का शासन स्थापित हुआ तो उन्होंने बहुत से ईरानी कलाकारों को भारत आमंत्रित किया। इन कलाकारों के साथ पारम्परिक भारतीय चित्रकार भी जुड़ गए। ये वे लोग थे जो चटक और विविध रंगों के उपयोग में दक्ष थे। बादशाह अकबर के समय के एक मुगल दरबारी कलाकार, मिस्किन का बनाया चित्र देखें। (चित्र 6.20)

यह चित्र 6.20 महाभारत और उसके परिशिष्ट, हरिवंश पर आधारित है जिसमें श्रीकृष्ण को गोवर्धन पर्वत उठाए हुए और उसके नीचे शरण लिए गायों, ग्वालों व अन्य लोगों को दिखाया गया है। इस चित्र में एक जटिल दृश्य को अनेकानेक लोगों के व्यक्तिगत चित्रण के साथ पेश किया गया है। ये लोग कोई सफल योद्धा या व्यापारी नहीं हैं बल्कि सामान्य ग्रामीण लोग हैं।

यहाँ एक और चित्र 6.21 को देखें जिसे बादशाह जहाँगीर के समय बिचित्र